Purva Mimaansa | Refereed | Peer Reviewed
ISSN: 0976-0237 | Volume 12, Issue September 2021 | Impact Factor 4.765

देवभूमि गढ़वाल (उत्तराखंड) के धार्मिक तथा आध्यात्मिक वाद्य

मधु शर्मा
अस्सिटैंट प्रोफेसर संगीत (गायन) विभाग, सनातन धर्म कालेज अम्बाला कैंट

सारांश

हमारे देश में वाद्य की महिमा बहुत प्राचीन काल से स्वीकार की गई है। आदिम मनुष्य तक सींग (Horns) का प्रयोग करता था। वेद और पुराणों में वाद्यों का उल्लेख मिलता है। भरत ने कुछ वाद्यों का नाम लिया है। समय के साथ-साथ वाद्य भी विकसित होते गए। किन्तु विकास की इस तीव्र प्रक्रिया में कुछ वाद्य विलुप्त भी हो गए। लोक जीवन को इस बात का श्रेय जाता है कि उसने इस विलुप्त होती सम्पदा को बचाए रखा। लोक वाद्य हमारी लोक संस्कृति के आधार तत्व हैं। इतने लम्बे समय से इन लोक वाद्यों को सामाजिक धरोहर के रूप में वर्तमान पीढ़ी तक सुरक्षित रखने का श्रेय लोक वादकों एवं लोक कलाकारों को जाता है। इन्हीं की कृपा से आज जो भी लोक कला एवं लोक संस्कृति की विभिन्न विद्याओं का ज्ञान हमें हो रहा है, यह धरोहर इस पीढ़ी तक के लिए उन्हीं के द्वारा संजोकर रखी गयी है। विभिन्न प्रदेशों के लोक वाद्यों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि हमारे सभी लोक वाद्य एक दूसरे से मिलते हैं। यद्यपि उनकी बनावट आकार आदि में कुछ अन्तर होता है। उदाहरणस्वरूप उत्तराखण्ड में चिमटे का प्रयोग मात्र भजन आदि में होता है जबकि पंजाब में भवन के साथ-साथ भांगड़ा नृत्य में भी चिमटे का प्रयोग किया जाता है। कांसे की थाली का प्रयोग, उत्तराखण्ड में जागर में हुड़का एवं ढोल के साथ एक सहायक वाद्य के रूप में किया जाता है, राजस्थान में कांसे की थाली का प्रयोग महिलाएं अपने पारम्पारिक लोक गायन में करती हैं। उत्तराखण्ड के विभिन्न लोक वाद्यों का प्रयोग देश के अन्य प्रदेशों में भी होता है, इन वाद्यों को उस प्रदेश का लोक वाद्य तो बताया गया है लेकिन इनकी उत्तराखंड के लोक वाद्यों के रुप में पहचान बहुत ही पीछे है।

पर्वतीय लोक वाद्यों के विषय में यह बात महत्वपूर्ण है कि ये अधिकतर पौराणिक काल से चले आ रहे हैं। पौराणिक दृष्टि से देखने पर प्रतीत होता है कि भगवान शंकर नृत्य करते समय डमरु बजाया करते थे। इसलिए डमरु को पौराणिक वाद्य भी कहा जाता हैं। दुंदभी व नगाड़े भी इसी श्रैणी के वाद्य है। रामायण में भी इनका उल्लेख है कि श्री रामचन्द्र जी ने धनुष तोड़ा तो दुन्दभि व नगाड़े बजने लगे। 'ढोल' का पर्वतीय लोक जीवन का आधार वाद्य है। ढोल को प्राचीनतम वाद्य कहा गया है। कहा जाता है कि भगवान शंकर ने ढोल की रचना सृष्टि के संहार के पश्चात् सृजन से पूर्व की निस्तब्धता को नष्ट करने के लिए की थी। इस प्रकार इन वाद्यों की प्राचीनता व पौराणिकता भी सिद्ध होती है।

धार्मिक व आध्यात्मिक दृष्टि से इन वाद्यों का विवेचन इस प्रकार है:—

PURVA MIMAANSA

1. ढोलः–

चर्म वाद्यों में ढोल एक अत्यन्त प्राचीन वाद्य है। गढ़वाली भाषा के प्रामाणिक ग्रंथ 'ढोल सागर' में कहा गया है कि ढोल का निर्माण प्रलय के बाद निस्तब्धता भंग करने के लिए ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने किया तथा सर्वप्रथम महेश (शिव) ने इस धारण कर वादन किया। ढोल के स्वरुप के सम्बन्ध में 'ढोल –सागर' के रचयिता का दृष्टिकोण नितान्त आध्यात्मिक है ढोल विश्व का प्रतीक –रुप हैं, जिसका असीम स्वरुप इस प्रकार है :–

उत्तर ढोली ढोल का मूलम्।
पच्छम ढोली ढोल की साखा,
दक्खण ढोली ढोल का पेटम्
पूरब ढोली ढोल का आँखा।

ढोल की उत्पत्ति के विषय में 'ढोल सागर' में निम्न कथन प्रस्तुत हैः–

1. श्री ई वरोवाच – श्री भगवान (शंकर) बोले
2. अरे आवाजी ! ढोल किन ढोल्यां – अरे आंवजी ! ढोल किसने ढोया ?
3. किने बटेल्यों, किने गढ़ायों ? किसने एकत्रित किया, किसने ढोल बनाया ?
4. किन ढोल गुढ़ाया ? ढोल की गढ़ाई किसने की?
5. किने ढोल ऊपरी कंदोटी चढ़ाया ? – किसने ढोल के ऊपरी कंदोटी चढ़ाई?
6. अरे गुनी जन ढोल ईश्वर ने ढोल्या – अरे गुणी जनो ! ढोल ईश्वर (शंकर) लाये।
7. पारवती ने बटोल्या – पार्वती ने उसे एकत्र (संभाला) किया।
8. विष्णु नारायण जी ने गढ़ाया – विष्णु भगवान ने उसे ढोल का रुप दिया।
9. चारे जुग ढोल मढ़ाया – चारों युगों ने ढोल की मढ़ाई की।
10. ब्रह्मा जी ने ऊपरी कंदोटी चढ़ाया –ब्रह्मा जी ने उसके ऊपर कंदोटी (कन्ध पट्टी) चढ़ाई।

ढोल सागर के अनुसार ढोल के समस्त अवयवों का सम्बन्ध विभिन्न देवी – देवताओं से माना गया है। डोरिका, नाद, गजावल (बजाने की यश्टिका) पुड़ी, कस्णिका (कसने वाली) स्कन्ध पट्टी और कुण्डली क्रमशः ब्रह्मा, विश्णु, भीम, गुणज्ञ, कुरुम और नाग के पुत्र माने गए हैः–

आपु पुत्रं भवे ढोलं, ब्रह्मा पुत्रं च डोरिका
पौन पुत्र भवे नादम्, भीम पुत्र गजाबलम्।
विश्णु पुत्रं भवे पूड्म, नाग पुत्रं कुण्डलिका।
कुरुम पुत्रं कंदोटिका, गुणी पुत्रं कस्णिका।।

ढोल सागर के अनुसार ढोल के माता – पिता कौन है? कौन इसकी पत्नी है। तथा इसका गौत्र क्या है? पार्वती जी महादेव भगवान शंकर से पूछती है –

को वा सुत चैव को जननी जनको,
को अस्य पत्नी किं गोत्रास्य ढोलः।
भगवान भांकर कहते हैः–
भव ाक्ति पत्नी अग्नि गोत्रस्य ढोलः ।।

'ढोल सागर' की सम्पूर्ण कथा भगवान शिव तथा पार्वती के संवाद के रुप में मिलती है। कथा के अनुसार प्रारम्भ में ऊँ, माता–पिता, तथा गुरु व देवता को आदेस लगाया जाता है। इसके पश्चात् पृथ्वी की रचना की कथा प्रारम्भ होती है। कि विष्णु की नाभि से निकले ब्रह्मा जी, तथा ब्रह्मा जी से ऊँकार' उत्पन्न हुआ, तब सातद्वीप नौ खण्ड रचे गए। पृथ्वी में वायु मण्डल, तेज मण्डल, सूर्य मण्डल, तेज मण्डल आदि रचे गए।

श्री गणेशाय नमः। श्री ईश्वराय नमः। श्री पारवत्युवाय। ऊंझे माता– पिता गुरु देवता को आदेसं। ऊं धनेनि संगति वेदति वेदेतिगगन ग्रीता युनि आरंभे कथं ढोली ढोल की साखा उच्येत। कथं बिरथा फलं फुलं सेमलं साब्रिराखं खड़क बोली रे ढोली पृथ्वी की साखा कहाऊँ पी पृथ्वी कथभूता विश्णु जा दिन कमल से उपजे ब्रह्मा जी तादिन कमल में चेतं विश्णु जल कमल से छूटे तबनहि चेतं। ऊंकार शब्द भये चेतं। अथ ऊंकार शब्द लेखितम्।। यद्याताम्यां मेते वरण गाद्यामह गिरजामाप्र आतेपरत्याहार करी तपस्या मये सृश्टि के रचेते। सात द्वीप नौखण्डा। कौन– कौन खण्ड। हरित खण्ड (1) भरत खण्ड (2) भीम (3) कमल (4) काशमीरी (5) वेद (6)देबा (7) हिरना (8) झिरवा (9) नौखण्ड बोली जेरे आवाजी । कौन कौन मण्डल पृथ्वी ऊपरी वायु मण्डल, वायु मण्डल ऊपरी तेज मण्डल, तेज मण्डल ऊपरी, मेघ मण्डल, मेघ मण्डल ऊपरी गगन मण्डल, गगन मण्डल ऊपरी अग्निमण्डल, अग्निमण्डल ऊपरी हीन मण्डल, हीन मण्डल ऊपरी सूर्यमण्डल, सूर्य मण्डल ऊपरी चन्द्र मण्डल। तारा मण्डल।''

ढोलसागर जितना भी और जिस भी रुप में मिलता है उसमें वाद्य– वादन की पद्धति चाहे उपलब्ध न हो। किन्तु सृष्टि की उत्पत्ति, पक्षियों, देवी, गंधर्वों, नाद ब्रह्मा, दर्शन, धरती, आकाश आदि के सम्बन्ध में भी यद्किंचित् सामग्री मिलती है। 'ढोल सागर' का अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट होती है। कि जिस तरह वेद सर्वप्रथम ब्रह्मा जी के मुख से निकले, उनका विधिवत आलेखन एवं विभाजन कर उन्हें चार वेदों का स्वरुप वेद व्यास जी के द्वारा दिया गया, इसी प्रकार 'ढोल सागर' भगवान शंकर तथा उनकी महाशक्ति देवी पार्वती के आपसी संवाद के रुप में, उनके मुँह से निकले ढोल सम्बन्धी विषय एवं ज्ञान का ग्रंथ है जिस समय भगवान शंकर एंव देवी पार्वती के बीच में यह ढोल सम्बन्धी संवाद चल रहा है। उस समय वहाँ पर श्रोता के रुप में तीसरा व्यक्ति एक औजी भी है, जिसने इस संवाद को सुना, उसे कंठस्थ किया, उसने और उसके वंशजों ने क्रमशः इस ढोल सागर को श्रृति परम्परा से पीढ़ी दर पीढ़ी वर्तमान में जनमानस तक पहुँचाया। ढोल सागर के संदर्भ में, लिखित रुप में न सही, लेकिन मौखिक परम्परा में उसने वेद व्यास का कार्य किया।

पर्वतीय प्रदेश में इसी कारण ढोल को मांगलिक वाद्य माना जाता है। मांगलिक कार्यो में पहले ढोल की पिढाई (तिलक) लगाई जाती है। तांबे के ढोल के पावन स्वरुप का गढ़वाल के लोक जीवन की आध्यात्मिक चेतना को अक्षुण्ण रखने में पर्याप्त योगदान रहा है। और इसी आध्यात्मिक

भावना से अभिप्रेरित होकर औजी ढोल की 'सरस्वती' मानते है तथा बसन्तोत्सव पर 'सरस्वती' मानकर ढोल की ही पूजा करते है।

गढ़वाल में मुख्यतः ढोल वादन की चार शैलियाँ प्रचलित है। बढ़ै (बधाई), धुयेंल, शब्द, नौबत, रहमानी। बढ़ै मंगल अवसर पर शुभ कामना या बधाई के अवसर पर बजाई है। धुयेलं प्रायः संध्या के समय देव पूजन के रुप में बजाई जाती हैं। भाब्द ढोल बजाने में लय के उत्थान, अवरोधन, उत्तेजन तथा विश्रान्ति को प्रकट करता है। इसका प्रयोग देव भाक्ति को जगाने, वातावरण में उत्सुकता पैदा करने या बारात के आगमन की सूचना देने के लिए होता है। नौबत रात्रि के अन्तिम प्रहर, मंगलकार्य या बंसत ऋतु में बजाई जाती है। 'रहमानी' मार्ग में चलते–चलते ढोल बजाने की कला का नाम है। बारात के वधु के घर पहुँचने हुए मार्ग में वर पक्ष द्वारा बजाई जाती है।

किसी समय में ढोल वादन की कला गढ़वाल में चरमोत्कर्श पर थी। ढोली ढोल बजाते हुए परस्पर ढोल के शब्दों द्वारा वार्तालाप करते थे, उनमें प्रतियोगिता होती थी। ढो ढोली इस प्रतियोगिता में ढोल बजाते हुए कभी– कभी एक दूसरे के ढोल की पूड़ी 'शब्द की चोट' से फाड़ देते थे। अब ढोल का इस प्रकार का वादन विवाह के अवसर पर देखा जा सकता है।

2. दमाऊँ (दमौ)

ढोल के साथ संगत वाद्य के रुप में दमौ का प्रयोग किया जाता हैं। इसका प्रयोग प्रत्येक मांगलिक कार्य में ढोल के साथ किया जाता है

3. डौंर–थाली

डौंर मांगलिक कार्यो, जागरों व उल्लास के अवसर पर प्रयुक्त होने वाला लोक वाद्य है। यह भगवान शंकर के डमरु का समरुप वाद्य है। यह वाद्य अति प्राचीन वाद्य है। कहा जाता है कि आदिकाल में महादेव जी ने चौदह बार बजाया जिसके फलस्वरुप चौदह माहे वर सूत्रों की उत्पत्ति हुईं। इसी डमरु ने आध्यात्मिकता को उसकी गहराई प्रदान की। इसका प्रत्येक शब्द सृष्टि, स्थिति तथा संहार के समय का बोध करवाता है। डौर के साथ अनिवार्य रुप में काँसे की थाली का प्रयोग किया जाता है। डौंर – थाली का वादन केवल ब्राह्मण पुरोहित ही करते है। इसे घड़ियाली लगाना कहा जाता है। घड़ियाली में देव भाक्ति का आवहान, नर्तन एवं पूजन के लिए ब्राह्मण पुरोहितों द्वारा जागर गाकर, डौंर–थाली बजाकर नृत्य करवाया जाता है। कभी–कभी घर्याभूत, आदरी व रणभूत नचाने के लिए इनका वादन किया जाता है। और डौंर– थाली का वादन देव स्थान अथवा घर के ओबरा (निचले हिस्से) में किया जाता है। इसी स्थान पर देवता, अप्सराओं या धन्यत्या भूतों को भी नचाया जाता है।

4. भांख

भांख गढ़वाल का प्रमुख धार्मिक वाच्य है। देव – पूजन में भांख का बजाना शुभ समझा जाता है। मन्दिरों में मुख्य रुप से इसका वादन किया जाता है।

PURVA MIMAANSA

5. नगाड़ा

नगाड़ा दमौ का ही बृहत् रुप होता है। यह तांबे का बना होता हैं। मुख्य रुप से रणक्षेत्र में इनका प्रयोग किया जाता था परन्तु साथ ही इस वाद्य का प्रयोग कई मन्दिरों में भी प्राचीन काल से चला आ रहा है। इसका प्रयोग मन्दिरों में नौबत बजाने के लिए किया जाता रहा है। यह नौबत मन्दिर में तीन बार लगाई जाती है। जिससे समस्त सृष्टि को जागरण का संदेश दिया जाता है। प्रातः कालीन नौबत सुबह चार–पाँच बजे के बीच लगाई जाती है। मध्यान्हकालीन नौबत दिन में 12 से 1 बजे के बीच लगाई जाती है। अन्तिम नौबत रात्रि 10 बजे के करीब लगाई जाती है।

मन्दिर में हर कोई व्यक्ति नगाड़ा नही बजा सकता। कुछ पुश्तैनी ढोली के वंशज ही यह कार्य करते है।

इन वाद्यों के अतिरिक्त ढफली, झांझ, मंजीरा, करताल आदि वाद्यों का प्रयोग भी गढ़वाल में प्रायः हर क्षेत्र में भक्ति संगीत के साथ किया जाता है इन वाद्यों के प्रयोग से भक्त–जनों की एकाग्रता में वृद्धि होती है। तथा उनका मान प्रभु की चरणों में सम्पूर्ण रुप से लीन हो जाता है।

इन लोक वाद्यों ने इस धारणा को पुष्ट किया है कि सम्पूर्ण प्रकृति संगीतमय है। संगीत सृष्टि के प्रारम्भ से ही सम्पूर्ण जीव जगत में वयाप्त है। जब तक देह में प्राणों का संचार है, यह देह भी एक अनहद नाद से निरंतर गुजित हो रही है। अर्न्त जगत के संगीत की व्यास का बोध हमें ब्रह्मा जगत का संगीत ही कराता है।

प्रकृति के कण कण से अविरल प्रवाहित होता स्वर तथा ताल की सीमाओं में बंधा उन्मुक्त संगीत, उसकी लय मं आछरियों का छम – छम नर्तन, हरदेव स्थान से निकलती सूर्यमुखी भांख तथा उर्ध्वमुखी नाद की मंगल ध्वनि, नौखण्डी धरती, तीन लोक, चौदह भुवनों के साथ–साथ पंचनाम देवताओं का वन्दन, इसी धुरी के ईद–गिर्द ही गढ़वाली लोक जीवन अवस्थित रहता है।

गढ़वाली भक्ति रस के जागर गीतों के दर्शन – श्रवण द्वारा ही श्रोता भक्ति रस से आपलावित होकर देवाभिभूत हो जाते है। सम्पूर्ण वातावरण देव– विशेश की अमोघ भाक्ति तथा दीन–दयालुता के भाव से अभिभूत हो जाता है।

भगवत् रति ही अध्यात्म का स्थायी भाव है। सगुन मतावलम्बियों ने भगवान की विविध रुपों में कल्पना करके अपनी भावानुभूतियों का प्रकाशन किया है। भक्त, भगवान की भक्तवस्सलता का बार –बार आख्यान करते है। नागर्जा, भगवती, नरसिंह, निरंकार, भैरो आदि धार्मिक जागर गीतों में भक्ति रस की पतित पावनी गांव प्रवाहित होती है। संसार के प्रति विरक्ति का भाव तथा मोह –माया से दूर रहकर प्रभु को सर्वस्य समर्पण का भाव भी गढ़वाली लोग गीतो में मिलता है :–

''दून्या न मरी जाण, धरती अमर राण''

अर्थात् दुनिया समाप्त हो जाएगी परन्तु धरती अमर रहेगी।

मौत सबुकू औद, आग सबुकू जगौव।

तिन कायर नी होणू, सागर को पाणी सागर समौद।

अर्थात मौत सभी को आती है, आग सभी को जलाती है, तू कायर मत बन, सागर का पानी तो सागर में ही समा जाता है।

उपरोक्त पंक्तियों में भी उस सर्वव्यापी, सर्वदा विद्यमान परम ब्रह्मा के प्रति गढवाली समाज की आस्था का चित्रण होता है। कि जीव उसी परम ब्रह्मा से उत्पन्न होकर पुनः उसी में लीन हो जाता है।

निष्कर्ष रुप में कहा जाता है कि गढ़वाल का लोग संगीत मूलतः धार्मिक व आध्यात्मिक परिवेश में पला– बढ़ा संगीत है। धर्म यहाँ के लोक जीवन का मेरु दण्ड है, जिसके ऊपर सम्पूर्ण गढ़वाली समाज टिका हुआ है। नव जीवन की किलकारियों से लेकर मृत्यु के गहन शोक तक मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में देवी –देवताओं को स्मरण करना गढ़वाली समाज नही भूलता। इसी धार्मिकता के दर्शन यहां के लोग संगीत में भी होते है।

गढ़वाल की प्राकृतिक छटा ही अनुपम है। यहां के वातावरण में एक विचित्र प्रकार की आध्यात्मिकता व्याप्त है, यही कारण है कि पूर्ण रुप से नास्तिक व्यक्ति भी कुछ क्षण के लिए आध्यात्मिक हो जाता है तथा उसका हृदय उस अज्ञात ब्रह्मा के प्रति नतमस्तक हो जाता है।

सन्दर्भ सूची

जुगल किशोर पटेशाली – उत्तरांचल के लोकवाद्य, पृ. 89, 90, 106 – तक्षाशिला प्रकाशन, 23/4761, अनसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली।

केशव अनुरागी – गढ़वाल और कुमाऊँ में ढोल की गूँज – संगीत जनवरी अंक, वर्ष 1966, पृ. 79, 80, 81, 82 – संगीत कार्यालय, हाथरस

ढोल सागर–मौखिक रुप से उपलब्ध गढ़वाली, संस्कृत मिश्रित ग्रंथ।

PURVA MIMAANSA